THE TIMES OF INDIA

Date: 06-03-25

Grow Up, Industry

To survive tariff wars, India needs to be clever & its key producers must up their quality game fast

TOI Editorials

Trump's reciprocal tariffs will hit Indian exports on April 2. Per a Citi Research analysis, the annual loss for India could $150bn, skewing heavily in India's favour. In fact, India's $45.7bn surplus put it in Trump's spotlight. He brought it up hours before meeting Modi in Feb, and again on Tuesday when he told Congress, "(India) charge us tremendously high tariffs than we charge them." US has a $1.7th trade deficit; India accounts for just 2.7% of it but its tariff walls are indeed high. Last year, India charged an average of 11% on US goods, whereas US charged only around 3%. Beyond averages, Trump has long complained about India's 100% tariff on cars. Industrial ethyl alcohol faces 150% duty, food items 68%, footwear 15-20%. It's not easy for America to sell to India.

Trump's intent has been clear since his campaign, and India tried to pre-empt tariffs by reducing some duties in last month's budget. It also offered to buy more US oil, gas and military hardware, eventually raising mutual trade to $500bn by 2030. But Trump 2.0 is not playing the waiting game -he'll sign out of White House in 2029. So, what can India do before tariffs take effect in four weeks? As our columnist Ajay Srivastava wrote on Wednesday, first, don't waste time signing an FTA because Trump doesn't value them. He scrapped the one he signed with Canada and Mexico in 2019. Also, don't retaliate. Instead, scrap tariffs on 90% of American industrial goods that are already free to import under other FTAS, and seek reciprocal concessions. Mean- while, strike deals with other countries affected by Trump's tariffs. Canada, for instance, will have lots of spare oil, fertiliser, gold, copper and plastic. Forget the rancour and grab the deals.

Tariffs are a headwind for Indian pharma - $8bn US sales last year - steel, aluminium, chemicals, jewellery, agri products, etc. Long term, our industries will have to become more resilient and find new markets because the world won't wait for them to come of age. The auto sector-Trump's pet peeve-has flourished with pro- tections in India for decades, yet India exported only 0.7mn cars last year. Mexico made 4mn and exported 3.5mn. And S Korean Hyundai is America's 4th largest carmaker now. Time we grew up too.

THE HINDU

Date: 06-03-25

Warriors of hope

ASHAS need adequate remuneration to be effective in their role

Editorials

When an acronym was coined to refer to a newly-created cadre of health workers for the country, as political gestures are wont to, care was taken to ensure the word invoked a sense of promise. The government decided to call them Accredited Social Health Activists (ASHA in Hindi means hope). In 2005, the Centre launched the National Rural Health Mission, and nominated ASHAS to be the link between the community and the public health-care delivery system. Today, there are over a million ASHAs across the country, and each one is firmly ensconced as the fulcrum of public health care in their area of operation in rural India. They now perform a full complement of functions: record birth and death data, implement interventions in non-communicable diseases and communicable diseases, neglected tropical diseases; and serve a crucial reproductive, maternal, new born, child and adolescent health role, among others. Monitoring health, hygiene and sanitation in the community is also upon them. The role that the ASHAS played during the COVID-19 pandemic as health-care workers trust- ed by the community raised their profile signifi- cantly, and the humble Indian health worker went global. The ASHAS were chosen for the WHO Director-General's Global Health Leaders Award in 2022, and were recognised for their 'outstanding contribution towards protecting and promoting health'. A recent PLOS Global Pu- blic Health study established that the likelihood women access maternal services, and have a saf- er, institution-based delivery, goes up by 1.6 times if they were connected with ASHAS.

And yet, 20 years after the ASHAS were creat- ed, the workers are still on the streets, protesting for fair wages and equitable treatment. The flaw lies in the way they were designated at the incep- tion - as volunteers. As such, they remain eligible only for a meagre fixed salary from the Centre and the rest of the compensation provided as in- centive (shared by the Centre and States) against a deliverable, for instance, for facilitating an insti- tutional birth. As per estimates, an ASHA worker can make anything between 75,000 and ₹15,000 a month. In 2018, the government approved an ASHA benefit package, providing coverage for ac- cidents, deaths and disability. But the truth is there is a heavy load on the ASHAS; they work long hours, travel long distances, frequently miss meals, and have little time to take care of their own health needs. It is high time that the govern- ment fulfils the hopes of its warriors of hope, and treats ASHAS as permanent employees, instead of as volunteers, to enable them to draw adeq- uate compensation and emoluments comparable to what is given to government employees.

दैनिक भास्कर

Date: 06-03-25

दुनिया नई चुनौतियों के लिए तैयार हो रही है

संपादकीय

ट्रम्प द्वारा छेड़ा गया टैरिफ युद्ध अब ट्रेड वॉर में बदल गया है। कई देशों के लिए यह अस्तित्व का खतरा है। दरअसल डिफ्रेंशियल टैरिफ (शुल्कों दरों में विविधता) को वैश्विक मान्यता इसलिए थी कि विकासशील देश भी अपना माल विकसित देशों को बेचकर आर्थिक मजबूती पाएं और आगे बढ़ें। डब्ल्यूटीओ के अस्तित्व के पीछे यही सोच थी। ट्रम्प ने इसे पलट दिया और समान टैरिफ (जैसे को तैसा) नीति के तहत दुनिया के कई बड़े विकासशील देशों को चुनौती दे डाली। अमेरिकी जनता को यह पसंद आया लेकिन इसके साथ ही जब ट्रम्प ने यूरोप के कई देशों के इलाके हड़पने की बात मजबूती से कही तो सभी देशों को अपने अस्तित्व पर खतरा मंडराता दिखा। कनाडा, डेनमार्क, जर्मनी, इंग्लैंड, फ्रांस, चीन, भारत और खाड़ी के देशों के लिए यह नई चुनौती थी। यूरोप गोलबंद हुआ, अरब दुनिया संगठित हुई और चीन तनकर खड़ा हो गया। भारत के लिए भी बेहतर विकल्प यह होगा कि अब ट्रेड-खिड़कियां खोले। ट्रम्प ने यूक्रेन को दी जाने वाली सभी सैन्य व अन्य मदद रोकने का ऐलान किया है। इसका मतलब यह भी है कि अगर यूक्रेन उनकी शरण में आ जाए तो मदद फिर शुरू की जा सकती है उधर यूरोप ने संगठित रूप से यूक्रेन को मदद देने के लिए कमर कस ली है। लेकिन क्या यूक्रेन यह भरोसा कर सकता है कि यूरोप बहुत दिन अमेरिका की तरह मदद देता रहेगा? क्या यूरोप के छोटे-छोटे देश इस स्थिति में हैं कि आर्थिक सामरिक मदद ज्यादा दिन दे सकें?

Date: 06-03-25

उत्तर बनाम दक्षिण का मसला फिर से तूल पकड़ने लगा है

अभय कुमार दुबे, (अम्बेडकर विवि, दिल्ली में प्रोफेसर)

हालांकि संघवाद का मसला पिछले कुछ वर्षों से बहस के केंद्र में था, लेकिन यह अंदाजा किसी को नहीं था कि यह अचानक दक्षिण बनाम उत्तर, विकास बनाम पिछड़ापन, आबादी नियंत्रण बनाम आबादी के विस्तार और हिंदी बनाम तमिल के रूप में निकलकर आ जाएगा। अभी केवल तमिलनाडु के सीएम स्टालिन और कर्नाटक के सीएम सिद्धरमैया ने ही इसे उठाया है। लगता है जल्द ही तेलंगाना और केरल से भी ऐसी ही आवाजें आने लगेंगी। आंध्र में सरकारी पार्टी केंद्र में सत्तारूढ़ गठजोड़ की सदस्य है, इसलिए सीएम इसे उठाने से हिचकेंगे, पर विपक्ष में खड़ी वाईएसआर कांग्रेस इस पर तत्परता से जोर देगी।

ऐसे ही मसलों के कारण साठ के दशक में तमिलनाडु के नेता (खासतौर से करुणानिधि) अपनी राष्ट्रीयता भारतीय न बताकर द्रविड़ बताने लगे थे। इस मसले को द्रविड़ बनाम आर्य के रूप में परिभाषित किए से जाने का खतरा भी है। ऐसा होने पर कुछ महाराष्ट्रीयन भी समर्थन में आ सकते हैं। उन्हें बस महात्मा फुले की उस विरासत को जगाने की जरूरत है, जिसके केंद्र में आर्य आक्रमण की थीसिस है। सच्चाई तो यह है कि इस बार इस विवाद में साठ के दशक से भी ज्यादा तीखापन आने का डर है। इसके दो कारण हैं।

पहला, दक्षिण भारतीय राज्यों को लग रहा है कि उनके ऊपर परिसीमन की तलवार लटक रही है। अगर आबादी को आधार बनाकर संसद की सीटों का नया परिसीमन किया गया तो एक अनुमान के अनुसार लगभग 900 सदस्यों वाली लोकसभा में 80 फीसदी से ज्यादा सीटें बिहार, यूपी, बंगाल, एमपी और राजस्थान के हिस्से में आएंगी और बाकी 20 फीसदी सीटों में दक्षिण भारत सिमट जाएगा। दक्षिण को आबादी नियंत्रण और आर्थिक विकास की सजा मिलेगी यानी उसकी सीटों में बहुत कम वृद्धि होगी, और उत्तर को आबादी बढ़ने देने और विकास की होड़ में पिछड़ने का राजनीतिक इनाम हासिल होगा यानी उसकी सीटों में बहुत अधिक बढ़ोतरी हो जाएगी।

दूसरा, केंद्र सरकार ने तमिलनाडु को दी जाने वाली समग्र शिक्षा स्कीम से संबंधित फंडिंग (2,152 करोड़ रुपए) रोक दी है। कारण यह बताया गया है कि इस प्रदेश ने 2020 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लागू करने से इंकार कर दिया है। यह बड़ी रकम शिक्षा अधिकार अधिनियम के प्रावधान के तहत केंद्र द्वारा प्रायोजित योजनाओं के लिए दी जानी थी। स्टालिन को एनईपी पर मुख्य आपत्ति त्रिभाषा सूत्र को लेकर है। यह नीति 50 के दशक में

राधाकृष्णन आयोग ने तैयार की थी, और इंदिरा सरकार ने 1968 में इसे पहली बार लागू किया था। मोटे तौर पर इसका मतलब यह है कि गैर- हिंदी प्रदेशों में माध्यमिक स्तर से ही छात्रों को हिंदी और अंग्रेजी के साथ-साथ क्षेत्रीय भाषा पढ़ाई जानी चाहिए और हिंदी प्रदेशों में अंग्रेजी और हिंदी के साथ एक अन्य आधुनिक भारतीय भाषा (जहां तक हो सके दक्षिण की कोई भाषा) की शिक्षा दी जानी चाहिए।

तमिलनाडु त्रिभाषा सूत्र को लागू नहीं करता। वह केवल दो भाषाएं (तमिल और अंग्रेजी) ही पढ़ाता है, हालांकि निजी स्कूल और केंद्रीय विद्यालय चाहें तो हिंदी पढ़ा सकते हैं। वह मानने के लिए तैयार ही नहीं है कि एनईपी लागू करना संवैधानिक दायित्व है। वह कहता है कि यह तो मौजूदा सरकार की नीति है, और केंद्र में सरकार बदलने पर यह बदली भी जा सकती है। तमिल नेताओं (जिनमें पी. चिदम्बरम भी शामिल हैं) की दलील है कि उत्तर में त्रिभाषा सूत्र का व्यावहारिक मतलब हिंदी, अंग्रेजी और तीसरी भाषा के रूप में संस्कृत पढ़ाना है। दक्षिण भारतीय भाषाएं वहां कोई नहीं पढ़ता। लेकिन दक्षिण पर हिंदी थोपी जाती है।

केंद्र दो तरीके से इसका समाधान कर सकता है। पहला, उसे तुरत-फुरत वह गणितीय फॉर्मूला तैयार करके पेश करना चाहिए, जो यह गारंटी करता हो कि आबादी के आधार पर परिसीमन में उन राज्यों को अपवाद बनाया जाएगा, जिन्होंने आबादी को नियंत्रित किया है। दक्षिण के राज्यों की इस फॉर्मूले पर सहमति भी जरूरी है। जहां तक भाषा का सवाल है, सरकार को अपनी ही पहले की शिक्षा मंत्री के वक्तव्य का सम्मान करना चाहिए। स्मृति ईरानी ने मानव संसाधन मंत्री के रूप में कहा था कि हर प्रदेश अपने पाठ्यक्रमों और विषयों के बारे में स्वयं अंतिम फैसला कर सकता है। कांग्रेस के शिक्षा मंत्री अर्जुन सिंह का भी यही कहना था।

Date: 06-03-25

चैटजीपीटी ही सब सोच लेगा तो हमारे स्टूडेंट्स क्या करेंगे?

नंदितेश निलय,वक्ता, (एथिक्स प्रशिक्षक एवं लेखक)

मैं अपने लेख की शुरुआत उस चिंता से कर रहा हूं, जिसे आज यूनिवर्सिटी और कॉलेज में आम तौर पर महसूस किया जा सकता है। और शायद स्कूलों में भी वह है एआई और उसके द्वारा जनित कंटेंट की नैतिकता का प्रश्न और उसके साथ शिक्षण की चुनौतियां शिक्षक इस परेशानी से जूझ रहे हैं कि छात्र बहुत आसानी से अपने प्रोजेक्ट या कोई उत्तर एआई से मदद लेकर सबमिट कर सकते हैं। उसकी प्रामाणिकता की जांच और वह भी हर पड़ाव पर कैसे की जाए ? उससे भी बड़ा प्रश्न यह है कि छात्र अब सोचने की क्षमता से ही दूर होते जा रहे हैं। अब कोई सोचना या थिंकिंग करना ही नहीं चाहता। इसकी जिम्मेदारी चैटजीपीटी को सौंप दी गई है। किसी भी शिक्षक

के लिए यह संभव नहीं कि वह छात्रों द्वारा लिखित सामग्री की सत्यता की जांच करता रहे। आज हर कंटेंट संदेह के दायरे में है। यह कैसे पता चले कि छात्र कुछ सीख भी रहे हैं या नहीं? उनके इरादे में निष्पक्षता या पारदर्शिता कैसे लाई जाए ?

एआई और नैतिकता के विषय पर हरारी भी अपनी चिंता व्यक्त करते हैं और एआई को एक 'एलियन इंटेलिजेंस' के रूप में देखते हैं। वे यह समझना चाहते हैं कि एलियन इंटेलिजेंस की भूमिका में एआई मानव बुद्धिमता की तो जगह नहीं ले रहा, लेकिन उसे एक नए तरीके से ढाल जरूर रहा है। यह आने वाले समय में मनुष्य के सोचने की शक्ति पर ही ग्रहण लगा सकता और उसकी रचनात्मकता पर भी उनका मानना है कि साल 2035 तक एक सुपर इंटेलिजेंट एआई समाज के संप्रेषण की मौलिकता में भी परिवर्तन कर सकता है। हमें नहीं भूलना चाहिए कि मानव सभ्यता की कहानी उस वानर के पेड़ से उतरने के बाद से शुरू होती है, जब वह चार पांव से दो पर आता है और पहली बार उसके दोनों हाथ मुक्त हो जाते हैं। वह जानता था कि सर्वाइव तभी कर सकता है, जब वह मस्तिष्क का इस्तेमाल कर सके। और उसने किया भी। लेकिन एआई ने मानो छात्रों के सोचने की शक्ति को ही क्षीण कर दिया है।

ऐसी परिस्थिति में प्राध्यापक क्या करे? वह छात्रों को कैसे प्रेरित करे? कैसे वह उनको वापस सोचने की दुनिया में लेकर आए ? और निष्पक्षता का क्या ? जब कुछ छात्रों के पास एआई का प्रीमियम सब्स्क्रिप्शन हो और कुछ के पास नहीं तो क्या होगा ? निम्न मध्यवर्ग के छात्र तो ऐसे ही कॉलेज की ग्रेडिंग से अछूते रह जाएंगे और जिनके पास उस टेक्नोलॉजी का सब्स्क्रिप्शन होगा उसके पास कंटेंट भी होगा। क्या यह संसाधनों पर नियंत्रण का अधिकार सामाजिक विभेद को बढ़ाएगा नहीं?

कॉलेज के स्तर पर चैटजीपीटी या अन्य चैटबॉट को धड़ाधड़ प्रयोग में लाना खतरनाक होता जा रहा है। अगर प्रश्न पत्र का ड्राफ्ट बनाते समय कोई प्रोफेसर भी एआई की मदद ले रहा है और उसके पास एक स्टैंडर्ड एआई का उत्तर भी है तो मूल्यांकन के वक्त भी निष्पक्षता का प्रश्न खड़ा होगा। डेटा की अपनी प्रकृति भी पूर्वाग्रहों को जन्म देती है और यह शिक्षक को उन पूर्वाग्रहों से बांधे रखेगी। ऐसे में जो छात्र एआई की मदद लेंगे, उनकी उत्तर-पुस्तिका की प्रामाणिकता की वह 'थिन लाइन' एक प्रोफेसर भला कैसे समझेगा? और जो निम्न मध्यवर्ग के छात्र बिना किसी चैटजीपीटी के उत्तर लिख रहे होंगे उनके प्रति न्याय के प्रश्न का भला क्या ?

एक छात्र को यकीन होना चाहिए कि 90 मिनट की क्लास को एक शिक्षक किसी तकनीक की सहायता के बिना भी ले सकता है। क्या आज के माहौल में यह संभव है कि शिक्षक बिना किसी पॉवर पॉइंट प्रेजेंटेशन के अपनी उपस्थिति दर्ज करा सके? उस यकीन के साथ कि एक शिक्षक के पास ज्ञान का भंडार होता है और उसे अपने

छात्रों को पढ़ाने के लिए तकनीकी निर्भरता की जरूरत नहीं है? क्या एक शिक्षक अपने विचारों से लैस कक्षा में आना चाहता है? याद करें जब अल्बर्ट आइंस्टीन प्रिंसटन यूनिवर्सिटी पहुंचे तो उनसे पूछा गया कि उन्हें अपनी क्लास के लिए किन चीजों की आवश्यकता होगी। आइंस्टीन ने जवाब दिया, एक टेबल, पेंसिल, लिखने के लिए नोटपैड्स और एक डस्टबिन, जो उनके द्वारा रद्द किए गए कागजों को संभाल सके!

दैनिक जागरण

Date: 06-03-25

एआइ क्रांति का साक्षी बनता भारत

अश्विनी वैष्णव, (लेखक भारत सरकार में इलेक्ट्रानिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी, रेल तथा सूचना एवं प्रसारण मंत्री हैं)

महाराष्ट्र के बारामती में एक छोटा किसान अर्टिफिशियल इंटेलिजेंस यानी एआइ के माध्यम से कृषि के नियमों को फिर से निर्धारित करने में जुटा है। एआइ के उपयोग से हम यहां कुछ असाधारण के साक्षी बन रहे हैं, उर्वरक के इस्तेमाल में कमी, बेहतर जल संसाधन एवं उपज में बढ़ोतरी। यह भारत की एआइ-संचालित क्रांति की एक झलक मात्र है। तकनीक और नवाचार अब प्रयोगशालाओं तक सीमित नहीं हैं, बल्कि आम नागरिकों के जीवन को बखूबी बदल रहे हैं। कई अर्थों में इस किसान की कहानी एक बहुत बड़े परिवर्तन का सूक्ष्म रूप है। यह सूक्ष्म रूप 2047 तक विकसित भारत की और हमारे प्रस्थान का हैं। भारत डिजिटल पब्लिक इंफ्रास्ट्रक्चर यानी डीपीआइ, एआइ, सेमीकंडक्टर और इलेक्ट्रानिक्स विनिर्माण पर जोर देकर अपने डिजिटल भविष्य को आकार दे रहा है। दशकों से भारत साफ्टवेयर के क्षेत्र में वैश्विक स्तर पर अग्रणी रहा है, किंतु अब यह हार्डवेयर विनिर्माण में भी बड़ी प्रगति कर रहा है। पांच सेमीकंडक्टर संयंत्र निर्माणाधीन हैं, जो वैश्विक इलेक्ट्रानिक्स क्षेत्र में भारत की भूमिका को मजबूत करते हैं। आज इलेक्ट्रानिक्स उत्पाद हमारे शीर्ष तीन निर्यातों में शुमार हैं और इस वर्ष भारत की पहली 'मेक इन इंडिया' चिप लांच की जाएगी, जो भारत में एक मील का पत्थर साबित होगी।

जहाँ सेमीकंडक्टर और इलेक्ट्रानिक्स भारत की तकनीकी क्रांति की रीढ़ हैं, वहीं डीपी आइ इसे आगे बढ़ाने वाली प्रेरक शक्ति के रूप में कार्य करता है। भारत इस तरह की एआइ संरचना के माध्यम से इसे सभी के लिए सुलभ बनाकर एआई का लोकतंत्रीकरण कर रहा है। इस संबंध में एक प्रमुख पहल 18,000 से अधिक ग्राफिक्स प्रोसेसिंग यूनिट (जीपीयू) के साथ भारत की कामन कंप्यूट सुविधा है। 100 रुपये प्रति घंटे से कम की रियायती लागत पर उपलब्ध यह पहल सुनिश्चित करेगी कि सभी हितधारकों के लिए यह सुविधा सुलभ हो। यह पहल मूलभूत

माडल और अनुप्रयोगों सहित एआइ आधारित प्रणालियों को विकसित करने के लिए जीपीयू तक पहुंच आसान बनाएगी ।

भारत विविध और उच्च गुणवत्ता वाले डाटा पर एआई माडल को प्रशिक्षित करने के लिए बड़े पैमाने पर गैर व्यक्तिगत अनाम डाटासेट भी विकसित कर रहा है। यह पहल पूर्वाग्रहों को कम करने और सटीकता सुधारने में मदद करेगी जिससे एआइ प्रणाली अधिक विश्वसनीय और समावेशी बनेंगी ये डाटासेट कृषि मौसम पूर्वानुमान और यातायात प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में एआइ- संचालित समाधानों को शक्ति प्रदान करेंगे। सरकार भारत के अपने आधारभूत माडलों के विकास में सहायता कर रही है। इसमें बड़े भाषा माडल (एलएलएम) व भारतीय जरूरतों के अनुरूप समस्या - विशिष्ट एआइ समाधान शामिल हैं। एआइ से जुड़े अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए उत्कृष्टता केंद्र भी स्थापित किए गए हैं।

डीपीआइ में भारत के अग्रणी कार्य ने वैश्विक डिजिटल परिदृश्य को महत्वपूर्ण रूप से आकार दिया है। कारपोरेट या राज्य नियंत्रित माडल के बजाय भारत का सार्वजनिक-निजी दृष्टिकोण का आधार, यूपीआइ और डिजीलाकर जैसे प्लेटफार्म बनाने हेतु सार्वजनिक धन का उपयोग करता है। निजी क्षेत्र, डीपीआइ के शीर्ष पर यूजर के अनुकूल, एप्लिकेशन- विशिष्ट समाधान बनाते हैं व नवाचार पेश करते हैं। इस माइल को अब एआई के साथ सुपरचार्ज किया जा रहा है। यूपीआई और डिजीलाकर जैसे वित्तीय व शासन प्लेटफार्म पर इन स्मार्ट समाधानों का प्रयोग किया जा रहा है भारत की डीपीआइ संरचना में वैश्विक रुचि जी-20 शिखर सम्मेलन में स्पष्ट थी जहां विभिन्न देशों ने माडल को दोहराने की इच्छा व्यक्त की थी। जापान ने भारत की यूपीआइ प्रणाली को पेटेंट दिया है, जो इसकी व्यापकता का प्रमाण हैं।

भारत ने महाकुंभ 2025 के निर्बाध संचालन के लिए अपने डीपीआइ और एआइ- संचालित प्रबंधन का लाभ उठाया है। एआइ-संचालित उपकरणों ने प्रयागराज में रेलवे स्टेशनों पर भीड़ नियंत्रण करने के लिए रेलवे यात्रियों की आवाजाही की निगरानी की। कुंभ सहायक चैटबाट में एकीकृत भाषिणी द्वारा सभी के लिए आवाज आधारित खोया-पाया सुविधा, तत्क्षण अनुवाद और बहुभाषी सहायता उपलब्ध कराई भारतीय रेल और उत्तर प्रदेश पुलिस जैसे विभागों के सहयोग ने समस्याओं के शीघ्र समाधान के लिए संचार प्रणाली को सुव्यवस्थित किया। डीपीआइ का लाभ उठाकर महाकुंभ 2025 ने तकनीक सक्षम प्रबंधन के लिए वैश्विक मानदंड स्थापित किया।

भारत का कार्यबल इसकी डिजिटल क्रांति के केंद्र में है देश हर हफ्ते एक वैश्विक क्षमता केंद्र (जीसीसी) जोड़ रहा है जो वैश्विक अनुसंधान और तकनीकी विकास के लिए एक पसंदीदा गंतव्य के रूप में अपनी स्थिति को मजबूत करता है। हालांकि, इस वृद्धि को बनाए रखने के लिए शिक्षा और कौशल विकास में निरंतर निवेश की आवश्यकता होगी। सरकार राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुसार, एआइ, 5जी और सेमीकंडक्टर डिजाइन को शामिल करने के लिए

विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में बदलाव करके इस चुनौती का समाधान कर रही है। इससे यह सुनिश्चित होगा कि स्नातक रोजगार के लिए तैयार कौशल के साथ कार्यबल में प्रवेश करें, जिससे शिक्षा और रोजगार के बीच का फासला कम हो।

भारत भविष्य के लिए तैयार कार्यबल का निर्माण कर रहा है। इसकी एआइ नियामक संरचना उत्तरदायी उपयोग सुनिश्चित करते हुए नवाचार को बढ़ावा देती है। 'कठोर' नियामक संरचना के द्वारा नवाचार के दबने का जोखिम और 'बाजार संचालित शासन द्वारा अक्सर कुछ लोगों के हाथों में शक्ति केंद्रित होने का खतरा रहता है। इसलिए भारत व्यावहारिक दृष्टिकोण अपना रहा है। एआइ से संबंधित जोखिमों को दूर करने के लिए केवल कानून पर निर्भर रहने के बजाय सरकार तकनीकी सुरक्षा से जुड़े उपायों में निवेश कर रही है।

एआइ वैश्विक उद्योगों को नया आकार दे रहा है। इसलिए भारत का दृष्टिकोण स्पष्ट है-समावेशी विकास के लिए प्रौद्योगिकी का लाभ उठाना और साथ ही नवाचार को बढ़ावा देने वाली नियामक संरचना को बनाए रखना होगा। नीतियों और इन्फ्रास्ट्रक्चर से परे यह परिवर्तन हमारे लोगों के बारे में है।

Date: 06-03-25

नई शिक्षा नीति का बेतुका विरोध

जगमोहन सिंह राजपूत, (लेखक प्रधानमंत्री संग्रहालय एवं ग्रंथालय में अटल फेलो हैं)

देश में नई शिक्षा नीति चार वर्ष पहले लागू की गई थी। अब उसका तेजी से क्रियान्वयन 'हो रहा है, लेकिन तमिलनाडु जैसे कुछ राज्य अपने चुनावी हित के लिए भाषा के नाम पर इसमें अड़ंगा लगा रहे हैं। उनका यह रवैया ठीक नहीं हैं, क्योंकि देश की शिक्षा व्यवस्था में समकक्षता तथा स्तरीय समानता लाना परम आवश्यक है। इसमें दो राय नहीं कि सभी राज्यों के अधिकारियों और विशेषज्ञों के सहयोग से बनी नई शिक्षा नीति देश की शिक्षा प्रणाली को भारत की संस्कृति और ज्ञान परंपरा से जोड़ने में पूरी तरह सक्षम है। यह ज्ञान- सृजन में भारत की अग्रणी भागीदारी भी लक्षित करती है। इसमें ऐसी भावी पीढ़ी तैयार करने की क्षमता है, जो भारत के प्रति समर्पित होगी और उसकी विविधता में एकता' को साकार कर विश्व के समक्ष उदाहरण बनाकर प्रस्तुत कर सकने की सामर्थ्य से परिपूर्ण होगी। उसमें भारतीय मूल्यों की समझ तो होगी ही, उसकी सराहना का भाव उसमें स्वतः ही अंतर्निहित हो जाएगा, लेकिन यह सब तभी संभव होगा, जब शिक्षा नीति का केवल राजनीति के कारण विरोध कर उसके क्रियान्वयन में बाधाएं उत्पन्न न की जाएं।

हर सरकार और विशेष रूप से तमिलनाडु की स्टालिन सरकार को यह समझना चाहिए कि उसके निर्णय भारत के युवाओं की आशाओं और अपेक्षाओं पर सदैव खरे उतरें। स्टालिन सरकार को नहीं भूलना चाहिए कि उसका आचरण भारत की नई पीढ़ी को प्रभावित करने वाला है। जनता के विश्वास पर खरा उतरना हर सरकार का नैतिक कर्तव्य है। ऐस करने में पक्ष या विपक्ष में होने से कोई फर्क नहीं पड़ना चाहिए, लेकिन दुख की बात हैं कि इस उत्तरदायित्व को अनेकानेक अवसरों पर भुला दिया जाता है।

दिल्ली पूर्ण राज्य नहीं हैं, लेकिन यहां के हालिया विधानसभा चुनाव सारे देश के लिए आकर्षण और उत्सुकता का केंद्र बने रहे। विभिन्न दलों ने जिस ढंग से चुनाव प्रचार के समय एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप लगाए, जिस भाषा का उपयोग किया, उसकी जितनी निंदा की जाए कम है। राजनीतिक प्रतिस्पर्धा में हो रहे शालीनता के इस हनन का बच्चों तथा युवाओं पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। हमें याद रखना होगा कि देश के भविष्य के कर्णधारों की पीढ़ी की तैयारी केवल घरों और कक्षाओं में ही नहीं होती हैं, बल्कि उस पर समाज के विशिष्ट जनों के आचरण का भी प्रभाव पड़ता हैं। देश के चयनित प्रतिनिधियों और संवैधानिक पद पर आसीन व्यक्तियों का प्रभाव तो उन पर सबसे अधिक पड़ता है, क्योंकि सारे संचार माध्यम लगातार उनसे संबंधित वर्णन ही प्रचारित-प्रसारित करते रहते हैं। स्कूलों की कक्षाओं में नैतिकता मानवीय मूल्यों की आवश्यकता पर अपने प्राध्यापक का प्रभावशाली भाषण सुनकर आया युवक जब संसद की कार्यवाही का सीधा प्रसारण देखता है और पाता हैं कि वहां तो सब कुछ उससे विपरीत हो रहा है, जो उसे सिखाया पढ़ाया गया है, तब उसकी वैचारिकता सही और गलत के बीच हिचकोले खाने लगती है। ऐसी स्थिति में उस पर नकारात्मकता के हावी होने की ही आशंका अधिक बनती है। वह यदि अपने कुलपति या प्राचार्य की टेबल पर चढ़कर कागज फाड़कर उनके मुंह पर फेंक देता हैं, तब वह किसी आधिकारिक रूप से सम्मानित घोषित महानुभाव का ही अनुसरण कर रहा होता है।

जब देश का युवा भारत की संसद में असंसदीय आचरण देखता है, जब वह संसद में अध्यक्ष और सभापति का असम्मान होते देखता है, तब उससे वह अनजाने और अनकहे ही बहुत कुछ अंतर्निहित कर लेता है। संसद के सदन लगातार स्थगित होते रहें और विश्वविद्यालय में कक्षाओं के नियमित चलने के उपदेश दिए जाएं, तो इसे अनावश्यक प्रलाप ही कहा जाएगा। यदि संसद सही उदाहरण प्रस्तुत नहीं करेगी तो नगरपालिका के पार्षद से अपेक्षा क्या बेमानी नहीं होगी? कार्यकारी पीढ़ी का भावी पीढ़ी के प्रति सबसे महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व अनुकरणीय और शालीन आचरण प्रस्तुत करना होता है। नीतियां कितनी ही सजग, सतर्क और व्यावहारिक क्यों न हों, जब वे केवल कागजों में रह जाएं, तब समझना चाहिए कि उनके क्रियान्वयन के प्रति जिम्मेदार लोगों ने अपना काम ठीक से नहीं किया।

संविधान केवल चुनावी हार-जीत तक सीमित नहीं है। उसमें व्यावहारिक शालीनता, सेवा, अनुकरणीय आचरण, ईमानदारी तथा निष्कपटता भी अंतर्निहित हैं। संविधान सभा की अंतिम बैठक में अध्यक्ष डा. राजेंद्र प्रसाद तथा प्रारूप समिति के अध्यक्ष डा. भीमराव आंबेडकर ने स्पष्ट किया था कि भविष्य में संविधान के प्रविधानों की सार्थकता और उपयोगिता, उसका क्रियान्वयन करने के लिए चुने गए लोगों पर यानी उनकी प्रवृत्तियों, नीयत और नैतिकता पर निर्भर करेगी। अपेक्षा तो यही थी कि स्वतंत्र भारत में नेताओं की जो नई पीढ़ियां आएंगी और सत्ता संभालेंगी वे भी उन्हीं आदर्शों का पालन करेंगी जिन पर चलकर स्वतंत्रता मिली थी, लेकिन अफसोस कि ऐसा करने वाले गिनती के लोग रह गए हैं। नई शिक्षा नीति हमारी इसमें मदद कर सकती हैं, लेकिन तभी जब उसे अमल में लाने के लिए सभी अपना योगदान करें।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 06-03-25

बढ़ेगी कारोबारी जंग

संपादकीय

अमेरिका के राष्ट्रपति की कुर्सी पर दोबारा बैठने के बाद जब डॉनल्ड ट्रंप ने कांग्रेस के संयुक्त सत्र को पहली बार संबोधित किया तो उनकी भाषा प्रचार भाषणों या उसी जगह छह हफ्ते पहले दिए गए उद्घाटन भाषण से अलग नहीं थी। जब वह बोलने के लिए मंच पर खड़े हुए तब उनकी छेड़ी कारोबारी जंग के कारण शेयर बाजार डूब रहे थे, गैलप के मुताबिक उन्हें राष्ट्रपति के तौर पर 45 फीसदी लोगों ने पसंद किया था। कार्यकाल की इतनी अवधि के बाद विभिन्न राष्ट्रपतियों को मिली रेटिंग के मामले में ट्रंप नीचे से दूसरे स्थान पर थे। सबसे कम 40 फीसदी रेटिंग भी उनके नाम के आगे ही लिखी हैं, जो 2017 में उन्हें मिली थी। इसके बाद भी ट्रंप 90 मिनट से ज्यादा बोले, जो अमेरिका के आधुनिक इतिहास में सबसे लंबा भाषण था। इसमें भी जुमले ज्यादा थे और तथ्य कम अपने गये तथ्यों, मेक अमेरिका ग्रेट अगेन (मागा) की बातों, ऊंचे वादों और नाटकीयता के बीच ट्रंप के संबोधन से दो संकेत साफ नजर आए।

सबसे घातक बात यह थी कि टैरिफ वॉर (शुल्क वृद्धि) से पीछे हटने का उनका कोई इरादा नहीं है। मंगलवार को उन्होंने मेक्सिको और कनाडा पर 25 फीसदी शुल्क लगाने की धमकी को अंजाम दे डाला और चीन से आयात पर 10 फीसदी शुल्क और लगाकर उसे 20 फीसदी कर दिया। उनके समर्थक कहलाने वाले द वॉल स्ट्रीट जर्नल ने भी ट्रंप के इस फैसले को 'सबसे बेवकूफाना शुल्क उपाय' करार दिया। कांग्रेस को संबोधित करते हुए उन्होंने

कहा कि बराबरी का शुल्क 2 अप्रैल से शुरू किया जाएगा। उन्होंने कहा, 'वे हम पर जितना कर लगाएंगे, हम भी उन पर उतना ही कर लगाएंगे। अगर वे दूसरे तरीके अपनाकर हमें अपने बाजार से बाहर करेंगे तो हम भी उन्हीं तरीकों से उन्हें अपने बाजार से बाहर कर देंगे।'

वाणिज्य मंत्री पीयूष गोयल द्विपक्षीय व्यापार समझौते पर बातचीत के लिए अमेरिका गए हैं और ट्रंप ने कहा कि भारत वाहन पर 100 फीसदी कर लगा रहा है। उन्हें वह भी ध्यान नहीं रहा कि भारत ने इस बार के अपने बजट में यह कर घटाकर 30 फीसदी कर दिया है। कुछ भी अप्रत्याशित कर देना ट्रंप का शगल है और इसीलिए भारत को यूरोपीय संघ के साथ अपने व्यापार समझौते को जल्द से जल्द अंजाम तक पहुंचा देना चाहिए। पिछले सप्ताहांत पर इस सिलसिले में सकारात्मक बातचीत हुई थी, जो दक्षिण पूर्व एशिया के तेजी से बढ़ते बाजारों के साथ मिलने और शुल्क व्यवस्था को तेजी से दुरुस्त करने का मौका दे सकती है।

ट्रंप के भाषण में यूक्रेन रूस शांति वार्ता आगे बढ़ने का संकेत भी मिला। यूक्रेन को अमेरिकी सहायता के बड़े-बड़े दावों के बावजूद इसके महत्त्वपूर्ण परिणाम हो सकते हैं। यूक्रेन के राष्ट्रपति बोलोदिमीर जेलस्की के साथ ओवल कार्यालय में हुई तनातनी सार्वजनिक हो जाने के बाद ट्रंप ने जेलेस्की के पास से आई चिट्टी पड़ी जिससे लगा कि खनिज सौदे के बदले शांति पर बातचीत परवान चढ़ सकती है। देश को अपने साथ लेने की कवायद के तौर पर उनका भाषण कामयाब नहीं रहा। रिपब्लिकन सदस्यों ने तो सराहना की मगर डेमोक्रेटिक सांसदों की खाली सीटें बताती हैं कि अमेरिका राजनीति में किस कदर दोफाड़ है। चीन और कनाडा तथा मेक्सिको के जवाबी वार के बीच व्यापारिक जंग थमती नहीं दिखती, जबकि येल की बजट लैब कहती है कि अमेरिका में कीमतें 1 से 1.2 फीसदी तक बढ़ जाएंगी। अमेरिका के लोग नवंबर की चुनावी जंग में अपने फैसले की कीमत आंकना जल्द ही शुरू कर सकते हैं मगर 'स्टेट ऑफ यूनियन एड्रेस' कहलाने वाले इस संबोधन से वही पता चलता है कि वैश्विक अर्थव्यवस्था के लिए संकेत विश्लेषकों के अनुमान से भी खराब हैं।

जनसत्ता

Date: 06-03-25

बेवजह टकराव

संपादकीय

तमिलनाडु के मुख्यमंत्री एमके स्टालिन ने परिसीमन के मुद्दे पर सर्वदलीय बैठक बुला यह साफ कर दिया है कि इस मसले को अब और टालना संभव नहीं होगा। हिंदी भाषा को लेकर उनकी टिप्पणियां भी विवादित रही हैं। साफ है कि वे इन दोनों ही मुद्दों पर दक्षिणी राज्यों को एक पाले में करने की राजनीति कर रहे हैं, जिसे देश के संघीय ढांचे के लिए ठीक नहीं कहा जा सकता। परिसीमन के मुद्दे पर दक्षिणी राज्य चिंतित हैं, लेकिन तमिलनाडु अत्यधिक मुखर है। स्टालिन चाहते हैं कि वर्ष 1971 की जनगणना को 2026 से तीस वर्षों के लिए लोकसभा सीट के परिसीमन का आधार बनाया जाए। मगर उन्हें समझना चाहिए कि परिसीमन दरअसल एक संवैधानिक जरूरत है, जिसका मकसद यह सुनिश्चित करना है कि संसद में जनता के प्रतिनिधित्व और आबादी में हो रही बढ़ोतरी का अनुपात ठीक बना रहे। यह कोई नई प्रक्रिया नहीं है। अब तक तीन बार हुए परिसीमन में राज्यों में आबादी के हिसाब से न्यायसंगत रूप से सीटों की संख्या निर्धारित हुई ।

दरअसल, अगले साल तमिलनाडु में विधानसभा चुनाव है। यही वजह है कि क्षेत्रीय भावनाएं सुलगाने की मुहिम में स्टालिन जुटे हुए हैं। स्टालिन ने हाल में नवयुगलों को जल्दी परिवार की योजना बनाने का सुझाव दिया और इसे परिसीमन के मुद्दे से जोड़ दिया। जहां तक भाषा का सवाल है, तमिलनाडु में शुरू से तीन भाषा नीति का विरोध होता रहा है। तीन भाषा नीति का हालिया विरोध ऐसे वक्त में हो रहा है, जब दक्षिण के राज्य परिसीमन को लेकर भी सवाल उठा रहे हैं। उन्हें डर है कि परिसीमन होने पर लोकसभा में दक्षिण के राज्यों की सीटें कम हो सकती हैं, जिससे केंद्र में उनकी आवाज कमजोर हो जाएगी। ऐसे में परिसीमन और हिंदी का विरोध एक साथ चल रहा है और दोनों एक-दूसरे को मजबूती दे रहे हैं। दरअसल, परिसीमन के बाद लोकसभा और विधानसभा की सीटों में बदलाव होगा। जनसंख्या के लिहाज से उत्तर भारत का पलड़ा भारी है। दक्षिण भारत के राज्यों को यही डर है कि जनसंख्या नियंत्रण पर बेहतर काम का उन्हें नुकसान न उठाना पड़े। क्षेत्रीयता को हवा देना स्टालिन को राजनीति की आसान डगर लग सकती है, लेकिन उन्हें देश के संघीय ढांचे के बारे में सोचना चाहिए और इस मुद्दे पर केंद्र से बातचीत के जरिए राह निकालने की कोशिश करनी चाहिए।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 06-03-25

गैर-बराबरी

संपादकीय

अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप जिस तरह से टैरिफ की तलवार चला रहे हैं, उससे दुनिया भर में हलचल मची हुई है। अमेरिका में दोनों सदनों संयुक्त अधिवेशन को अपने दूसरे कार्यकाल में पहली बार संबोधित करते हुए ट्रंप ने अपने इरादे फिर स्पष्ट कर दिए हैं। टैरिफ की उनकी तलवार ने उनके प्रतिकूल रहने वाले देशों को ही नहीं, बल्कि मित्रवत देशों को भी विचार-मंथन में डाल दिया है। टैरिफ के मामले में कनाडा और मैक्सिको तो उनके निशाने पर हैं ही, 2 अप्रैल से टैरिफ की तलवार भारत और चीन पर भी पूरी तेजी से चलने लगेगी। जहां तक भारत का प्रश्न है, अमेरिकी नेताओं व अधिकारियों से लगातार बातचीत चल रही है, पर अभी तक कोई ठोस नतीजा सामने नहीं आया है। ऐसे में, भारत सरकार का शांत रवैया प्रशंसनीय है। गौर करने की बात है कि बुधवार को अपने संबोधन में ट्रंप ने भारत को विशेष रूप से नाम लेकर निशाना बनाया है। भारतीय अधिकारी प्रतिकूल स्थितियों में भी अधिकतम फायदे की तलाश में हैं और यह सही कूटनीति है।

इस मामले में चीन का रवैया ज्यादा आक्रामक है, तो यह उसकी मजबूरी भी है। अमेरिका की ओर होने वाला चीन का नियत अगर प्रभावित होता है, तो चीन को बड़ा नुकसान होगा। आक्रोशित चीन ने तो यहां तक कह दिया है, 'अगर अमेरिका युद्ध चाहता है, चाहे वह टैरिफ युद्ध हो, व्यापार युद्ध हो या कोई और तरह का युद्ध हो, हम अंत तक लड़ने के लिए तैयार हैं।' यह भी गौर करने की बात है कि ऐसी कड़ी प्रतिक्रिया की अभिव्यक्ति अमेरिका स्थित चीनी दूतावास ने एक्स के जरिये की है। मतलब साफ है कि बड़े नुकसान की आशंका के बावजूद बीजिंग किसी भी तरह की घबराहट का इजहार नहीं कर रहा है। कनाडा भी अमेरिकी रुख के प्रति आक्रामक है। उसने अमेरिका के तीन राज्यों की बिजली काट देने तक की धमकी दी है। वास्तव में, यह दुनिया के लिए एक बेहतर संकेत है कि टैरिफ की तलवार के निशाने पर आया कोई भी देश ज्यादा विचलित नहीं है। एक तरह से सभी मुकाबले के लिए तैयार हो रहे हैं।

वैसे, लंबे समय से अमेरिका अपने स्वार्थ को सबसे ऊपर रखता आया है, पर वह दुनिया के प्रति अपनी जिम्मेदारी को भी कमोबेश समझता व निभाता रहा है। अंतर यह हुआ है कि अब वह जिम्मेदारी छोड़कर बराबरी को तरजीह देने लगा है, तो इसका अर्थ यह नहीं कि अमेरिका को इससे केवल लाभ होगा। दूसरे देश भी बराबरी करेंगे। टैरिफ की तलवार से खुद अमेरिका को नुकसान होगा। कहना ही चाहिए कि अमेरिका टैरिफ विवाद को बिना शोर मचाए, आसानी से सुलझा सकता था। शोर से जो माहौल खराब हुआ है, उसमें सर्वाधिक नुकसान उस अमेरिका सरकार को होगा, जिसे दुनिया के ज्यादातर देश सबसे प्रभावी मानते आए हैं। समझने की बात है कि ट्रंप जिस बराबरी की बात कर रहे हैं, दरअसल, वह एकतरफा है। ताजा घटनाक्रम में अगर देखें, तो अमेरिकी राष्ट्रपति ने पाकिस्तान का आभार जताया है। आभार इसलिए कि पाकिस्तान ने एक आतंकी पकड़कर अमेरिका को सौंपा है अपनी सुविधा के लिए आतंकी पालने मारने के खिलवाड़ में शामिल पाकिस्तान की तारीफ कैसी बराबरी या कैसा न्याय है? ट्रंप को अपने 13 शहीद सैनिकों की चिंता है, पर उनके साथ शहीद हुए 170 के करीब अफगानियों के

लिए दो शब्द नहीं हैं। दरअसल, श्रेष्ठतम बनाम सामान्य वाली यह गैर-बराबरी ज्यादा बड़ी चिंता है, टैरिफ की गैर-बराबरी तो समय-समय की बात है।

Date: 06-03-25

अमेरिका ने छेड़ा सीमा शुल्क संग्राम

अरुण कुमार, (वरिष्ठ अर्थशास्त्री)

दूसरी बार सत्ता संभालने के बाद कांग्रेस (अमेरिकी संसद) के अपने पहले संबोधन में राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने टैरिफ, यानी सीमा शुल्क को लेकर अपनी सरकार की मंशा स्पष्ट कर दी। उन्होंने कहा, टैरिफ का मतलब है, अमेरिका को समृद्ध बनाना और यह हमारे देश को 'फिर से महान' बनाएगा। उन्होंने घोषणा की कि जब दूसरे देश दशकों से अमेरिका के खिलाफ टैरिफ का इस्तेमाल कर रहे हैं, तो ऐसा करने की बारी अब अमेरिका की है। बाकायदा भारत का नाम लेकर उन्होंने कहा कि जो देश अमेरिका पर जितना टैरिफ लगाता है, आगामी 2 अप्रैल से हम भी उस पर समान टैरिफ लगाएंगे। इस एलान से उस 'टैरिफ वार' की अब आधिकारिक शुरुआत हो गई है, जिसकी आशंका ट्रंप के सत्तासीन होने के बाद से ही जताई जा रही थी। अमेरिका स्थित चीनी दूतावास ने तो एलान भी कर दिया है कि यदि अमेरिका ऐसी जंग चाहता है, तो चीन अंत तक उससे लड़ने के लिए तैयार है।

जाहिर है, इस पूरे घटनाक्रम ने विश्व व्यवस्था में अनिश्चितता बढ़ा दी है, जिसके कई तरह के नुकसान दूसरे देशों को ही नहीं, खुद अमेरिका को भी हो सकते हैं। सीमा शुल्क बढ़ने से अमेरिका पहुंचने वाले उत्पादों की कीमतें बढ़ जाएंगी। दुनिया में तमाम कारोबार विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) के नियमों के तहत होते है, जिसका एक प्रावधान यह भी है कि विकसित देशों के तुलना में आर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण कुछ देशों को विशेष रियायत दी जाएगी, ताकि वहां के उद्योगों पर नकारात्मक असर न पड़े। ट्रंप ऐसी राहत पाने वाले देशों को ही 'टैरिफ किंग' कह रहे हैं। अगर 2 अप्रैल से अमेरिकी राष्ट्रपति की घोषणा प्रभावी हो जाती है, तो इससे पूरी दुनिया प्रभावित होगी, क्योंकि डब्ल्यूटीओ का एक नियम यह भी है कि हर देश अपने साथ कारोबार करने वाले सभी मुल्कों पर समान अनुपात में सीमा शुल्क लगाएगा। यूरोप इससे कहीं ज्यादा प्रभावित होगा, क्योंकि अभी वह यूक्रेन संकट में उलझा हुआ है। इस दोतरफा मुश्किल के कारण वहां उथल-पुथल बढ़ जाएगी।

इन सबसे अमेरिका में लोगों की खरीदारी की क्षमता प्रभावित होगी, जिससे मांग में कमी आ सकती है। इसका असर उत्पादन पर पड़ेगा और अंततः महंगाई बढ़ जाएगी। कुछ यही स्थिति अन्य देशों में पैदा होगी। सभी जगह निम्न आय वाले लोग खरीदारी से बचने का प्रयास करेंगे, जिससे वहां के उत्पादन और निवेश पर नकारात्मक

असर पड़ेगा। इससे रोजगार में भी कमी आएगी। राष्ट्रपति ट्रंप उम्मीद जता रहे हैं कि उद्योग अमेरिका की ओर फिर से लौट जाएंगे। मगर यह तुरंत नहीं होने वाला। इसमें लंबा वक्त लगेगा और तब तक अर्थव्यवस्था के गिरने से विकास दर में गिरावट आ जाएगी। यानी, ट्रंप अमेरिका को फिर से महान बनाने का जो वायदा कर रहे हैं, स्थिति इसके बिल्कुल विपरीत हो सकती है। इसका वहां की राजनीति पर भी असर पड़ेगा, क्योंकि अगले डेढ़ साल में मध्यावधि चुनाव होने वाले हैं। ऐसे में, यदि सरकारी सेवाओं में कतरब्योंत होती है और रोजगार परिदृश्य पर असर पड़ता है, तो ट्रंप की लोकप्रियता प्रभावित हो सकती है।

इस पूरे घटनाक्रम का असर भूमंडलीकरण और डॉलर पर भी पड़ेगा। अभी भले ही राष्ट्रपति ट्रंप अमेरिकी हितों की वकालत कर रहे हैं, लेकिन भूमंडलीकृत दुनिया में यदि साझा हितों की अनदेखी की गई, तो अमेरिका को भी नुकसान हो सकता है। मुमकिन है कि बाकी देश उन उत्पादों का आपस में व्यापार बढ़ा सकते हैं, जो अभी वे अमेरिका के साथ कर रहे हैं। अगर यूरोप, कनाडा, मैक्सिको, चीन, भारत जैसे तमाम राष्ट्र एक-दूसरे के खिलाफ टैरिफ पहले की तरह ही रखें, लेकिन आपसी कारोबार में तेजी ले आएं, तो अमेरिका को किनारे किया जा सकता है। इससे दुनिया गैर- भूमंडलीकरण और गैर- डॉलर की ओर बढ़ जाएगी, जिससे अमेरिका का महत्व घटेगा। इससे विकसित देशों का दबदबा भी कम हो सकता है।

ट्रंप के इस कदम से मंदी का खतरा बढ़ गया है। अगर कीमतों में उछाल आने से विकास दर प्रभावित होती है, तो अमेरिका में मंदी आ सकती है। जर्मनी दो साल से इससे जूझ रहा है, जबकि यूरोप में यूक्रेन संकट के कारण पहले से मंदी की आशंका बनी हुई है। इस सूरतेहाल में तो वैश्विक मंदी मुहाने पर खड़ी जान पड़ती है।

जाहिर है, भारत भी इन सबसे अछूता नहीं रहेगा। क्योंकि अगर अमेरिका समान रूप से हम पर सीमा शुल्क लगाता है, तो हमारे निर्यात पर इसका असर पड़ेगा। उसे नियत होने वाली चीजों का उत्पादन प्रभावित होगा । आपूर्ति श्रृंखला में होने वाली इस रुकावट की सबसे अधिक मार गरीब तबकों पर पड़ेगी। जब महंगाई बढ़ती है, तो निम्न आय वर्ग के लोग खरीदारी में अरुचि दिखाने लगते हैं, जिसका असर मांग पर पड़ता है। यानी यहां एक ऐसी स्थिति पैदा हो सकती है, जिसमें अर्थव्यवस्था में गिरावट भी होगी और महंगाई भी बढ़ेगी।

यह अनिश्चितता हमारे शेयर बाजार को भी प्रभावित करेगी। बेशक, करीब 6,000 बड़ी कंपनियों में से महज 1,500 ही बाजार में सक्रिय हैं और सूक्ष्म व लघु उद्योगों की यहां कोई हिस्सेदारी नहीं है, फिर भी जब शेयर बाजार बिगड़ता है, तो निवेश के माहौल पर नकारात्मक असर पड़ता है। अभी बाजार में इसलिए गिरावट आई है, क्योंकि विदेशी निवेशक अपना पैसा निकाल रहे हैं। इसके कारण स्थानीय लोग भी बाजार से दूरी बनाने लगे हैं। चूंकि भारतीय शेयर बाजार में उथल-पुथल मची है, इसलिए लोग वहां पैसा लगाने लगे हैं, जहां से उनको

निश्चिंतता मिल सके। इस लिहाज से सोना व डॉलर ही उनके मुफीद है और वे इसी में निवेश कर रहे हैं। निवेशकों के यूं बाहर जाने से हमारी विकास दर भी प्रभावित होगी।

कुल मिलाकर, निवेश, लोगों की क्रय क्षमता, निर्यात, आपूर्ति श्रृंखला आदि सब पर इस पूरे घटनाक्रम का असर पड़ना तय है। इससे रुपये पर भी दबाव बढ़ेगा, जिससे महंगाई बढ़ सकती है, क्योंकि रुपया गिरने से उत्पादों के आयात पर हमें ज्यादा पैसे चुकाने होंगे, जिसकी भरपायी घरेलू बाजार में मूल्य- वृद्धि से की जाती है। इस परिस्थिति में अच्छा यही होगा कि अनौपचारिक क्षेत्र को मजबूत बनाया जाए। मांग की स्थिति बनाए रखने में यदि हम सफल रहे, तो अर्थव्यवस्था में गिरावट थामी जा सकेगी।

Date: 06-03-25

पर्वतों से ग्लेशियर के टूटने का सिलसिला कब टूटेगा

वीरेन्द्र कुमार पैन्यूली, (पर्यावरण वैज्ञानिक)

उत्तराखंड के चमोली जिले में स्थित बदरीनाथ धाम से तीन किलोमीटर दूर माणा गांव के समीप हिमस्खलन हादसे की चपेट में आई आठ जिंदगियों को बचाया न जा सका। इसके पहले 7 फरवरी, 2021 को चमोली जिले में ही रैणी व तपोवन क्षेत्र में ग्लेशियर टूटने से जल प्रलय आया था। तब 'ग्लेशियर बर्स्ट' जैसे शब्द का उपयोग किया गया था। मीडिया सनसनी के लिए शायद ग्लेशियर बर्स्ट शब्द ठीक है, परंतु वैज्ञानिक शब्दावली में इसका खास उल्लेख नहीं है। ग्लेशियर को समझना जरूरी है।

दशकों से यह ख़बर हम सभी सुनते आ रहे हैं कि हिमालयी ग्लेशियर तेजी से पिघल रहे हैं। अमेरिका की एक एजेंसी तो पूरे हिंदुकुश हिमालय पर ही जलवायु- परिवर्तन के खतरों से आगाह कर चुकी है। सब जानते हैं कि इन्हीं ग्लेशियरों के कारण हिमालय को जल मीनार भी कहा जाता है। यह वैज्ञानिक राय स्पष्ट है कि सर्दियों में पर्वतों पर बर्फ को जमने देना चाहिए, पर शीतकाल में भी उन पहाड़ों पर भारी मशीनी कार्य हो रहे हैं, जिन पर ग्लेशियर टिके हैं। यह बहुत चिंताजनक है। अतः इसे मानव उत्प्रेरित त्रासदी भी कहा जा सकता है। यही नहीं, दशकों से यह पूरी तरह संज्ञान में है कि ग्लेशियरों के भीतर झीलें बढ़ रही हैं, जिनकी परिधियां जब टूटजाती हैं, तो भारी तबाही लाती हैं, तब भी विशेषकर उत्तराखंड में ग्लेशियर के प्रति संवेदना न जागना चिंताजनक है।

ग्लेशियर तो खुद पर्यावरण की मार खाए हुए हैं। सदैव गतिमान रहना उनका स्वभाव है। ग्लेशियर जब प्राकृतिक रूप से किसी पहाड़ के किनारे पहुंचते हैं, तो वहां लटके या झूलते रहते हैं व कभी टूटकर गुरुत्वाकर्षण शक्ति के वशीभूत हो जाते हैं। उनके नीचे नदियां हों, तो उन पर गिरेंगे। बस्तियां होंगी, तो उन पर गिरेंगे। इसमें ग्लेशियरों का क्या दोष ? पहली क्षति उनको ही होती है, एक हादसे में उनका बहुत कुछ सदा के लिए समाप्त हो जाता है। जब हादसा हो जाता है, तब बयानबाजी होती है, अन्यथा कमाई करने के नाम पर चाहे पर्यटकों से हों या तीर्थयात्रियों से हिमस्खलन संभावित क्षेत्रों में कंपन पैदा करने वाले निर्माण कार्य जारी रहते हैं।

पवित्र चार धाम- बदरीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री व यमुनोत्री ग्लेशियर के अंचल में ही स्थित हैं। इन सभी धाम में लाखों लोग पहुंचते हैं। हजारों वाहन आते हैं। हवाई परिवहन भी बढ़ रहा है। यहां सीमेंट सरिया से भी शहरीकरण हो रहा है। नतीजा यह कि ग्लेशियर साल- दर-साल घटते जा रहे हैं। वैश्विक प्रदूषण और कार्बन उत्सर्जन से खतरे बढ़ते जा रहे हैं। सहज ही यह सवाल पैदा होता है कि क्या राज्य सरकार ग्लेशियर के बचाव के लिए कुछ कर सकती है ? ग्लेशियर को बचाने की पहल किसे करनी चाहिए और क्या वाकई ग्लेशियर की चिंता कोई कर रहा है? हर हादसे के बाद ऐसे सवाल खड़े होते हैं और समय के साथ शांत हो जाते हैं।

उपाय क्या है? जिन चट्टानों पर ग्लेशियर टिके हों, वहां किसी भी तरह की छेड़छाड़ नहीं होनी चाहिए। तापक्रम बढ़ने से ग्लेशियर का पिघलना सामान्य बात है, लेकिन उन पर गिरने वाली बर्फ से भरपाई होती रहे, तो उनका संतुलन बना रहता है।

साल 2018 में बेंगलुरु के जलवायु परिवर्तन पर काम करने वाले एक संस्थान के वैज्ञानिकों ने अपनी एक रिपोर्ट में कहा था कि पश्चिमोत्तर हिमालय में 1991 के बाद औसत तापमान 0.66 सेंटीग्रेट बढ़ गया है। वहां सर्दियां भी लगातार गर्म हो रही हैं। यथार्थ यह है कि हिमालय के ग्लेशियर विश्व के जलवायु के संकेतक हैं। क्या इन संकेतकों पर ठीक से गौर किया जा रहा है? बिजली उत्पादन, औद्योगिकीकरण, परिवहन, पर्यटन, तीर्थाटन के नाम पर ग्लेशियर क्षेत्रों तक भीड़ व गतिविधियां बढ़ रही हैं। ये दुर्लभ पर्वतीय क्षेत्र महज आमोद-प्रमोद के लिए नहीं हैं। इन पर्वतों और ग्लेशियर को स्वस्थ रहने देना चाहिए। गंगा, यमुना जैसी नदियों और हिमालय को जीवित इंसान की तरह मानना हम कब शुरू करेंगे ?

मैं 1970 के दशक में बदरीनाथ से माणा तक हुए भू- भौतिकीय सर्वेक्षण में शामिल रहा था और तब भी यह संवेदनशील क्षेत्र था। आज व्यावसायिक हित इतना हावी हो गया है कि माणा को टूरिस्ट हब बना दिया गया है।

स्थानीय सजग लोग भी मानते हैं कि वास्तविक चिंताओं और खतरों की अनदेखी हो रही है। क्या ताजा हादसे के बाद अनदेखी का सिलसिला टूटने वाला है?